Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal
(Established under an Act of State Assembly in 1991)
मध्यप्रदेश भोज (मुक्त) विश्वविद्यालय, भोपाल

स्व-अधिगम पाठ्य सामग्री

बी.एड. प्रथम वर्ष

बाल्यावस्था एवं उसका विकास
(CHILDHOOD AND GROWING UP)

GEDE-01

बी.एड. प्रथम वर्ष

बाल्यावस्था एवं उसका विकास

(CHILDHOOD AND GROWING UP)

GEDE-01

Department of Multimedia Education (DME)
Madhya Pradesh Bhoj (Open) University
Raja Bhoj Marg, Kolar Road, Bhopal

मध्यप्रदेश भोज (मुक्त) विश्वविद्यालय – भोपाल
MADHYA PRADESH BHOJ (OPEN) UNIVERSITY - BHOPAL

Reviewer Committee

1. Dr. Mamta Bakliwal
   Professor
   Rajiv Gandhi College, Bhopal (M.P.)

2. Dr. Rakhi Sharma
   Assistant Professor (Guest Faculty)
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal (M.P.)

3. Dr. Lata Malviya
   Professor
   I.E.S. University, Bhopal (M.P.)

Advisory Committee

1. Dr. Jayant Sonwalkar
   Hon'ble Vice Chancellor
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal (M.P.)

2. Dr. L.S.Solanki
   Registrar
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal (M.P.)

3. Dr. Jyoti S. Parashar
   Assistant Professor
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal (M.P.)

4. Dr. Mamta Bakliwal
   Professor
   Rajiv Gandhi College, Bhopal (M.P.)

5. Dr. Rakhi Sharma
   Assistant Professor (Guest Faculty)
   Madhya Pradesh Bhoj (Open) University,
   Bhopal (M.P.)

6. Dr. Lata Malviya
   Professor
   I.E.S. University, Bhopal (M.P.)

COURSE WRITER

Dr Suman Lata, Lecturer, Ginni Devi Modi Girls (PG) College, Modinagar, Ghaziabad (UP)
Units: (1-4)

Copyright © Reserved, Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal

All rights reserved. No part of this publication which is material protected by this copyright notice may be reproduced or transmitted or utilized or stored in any form or by any means now known or hereinafter invented, electronic, digital or mechanical, including photocopying, scanning, recording or by any information storage or retrieval system, without prior written permission from the Registrar, Madhya Pradesh Bhoj (Open) University, Bhopal.

Published by Registrar, MP Bhoj (Open) University, Bhopal in 2020

SYLLABI-BOOK MAPPING TABLE

बाल्यावस्था एवं उसका विकास

Syllabi	Mapping in Book
इकाई–1 विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में बालक एवं बाल्यावस्था– विभिन्न संस्कृतियों में बाल्यावस्था, संस्कृति, समाज एवं बाल्यावस्था; अभिवृद्धि एवं विकास– अभिवृद्धि एवं विकास की अवधारणा, वृद्धि एवं विकास के तरीके; विकास के सिद्धान्त– विकास के विविध सिद्धान्त, विकास की अवस्थायें; बालकों की वृद्धि एवं विकास– बालक अधिगमकर्ता के रूप में, मनोवैज्ञानिक पहचान के रूप में बालक, बालकों के मुख्य कौशलों का विकास, बालकों का मानसिक विकास, बालकों का भाषा विकास, संवेगात्मक/भावनात्मक विकास, लिंग भूमिका, खेलों द्वारा समाजीकरण	**इकाई 1** : बच्चों की अभिवृद्धि एवं विकास **(पृष्ठ 3–97)**
इकाई–2 विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में किशोरावस्था– विभिन्न संस्कृतियों में किशोरावस्था, लिंग पहचान एवं लिंगीय स्टीरियोटाइप; किशोरावस्था में अभिवृद्धि एवं विकास– किशोरावस्था में शारीरिक विकास, किशोरावस्था में मानसिक विकास, किशोरावस्था में मनोसामाजिक विकास, शारीरिक, सामाजिक व मनोवैज्ञानिक आवश्यकताएं; सामाजिक–सांस्कृतिक सन्दर्भ में किशोर– नगरीय मलिन बस्तियों में किशोरों का विकास, भारतीय सन्दर्भ में किशोरों की समस्यायें, किशोरों को निर्देशन की आवश्यकता, निर्णय लेना तथा जोखिम वहन व्यवहार	**इकाई 2** : किशोरावस्था की अभिवृद्धि एवं विकास **(पृष्ठ 99–152)**
इकाई–3 अधिगम का व्यवहारवादी दृष्टिकोण– सम्बद्ध–प्रतिक्रिया सिद्धान्त, क्रिया प्रसूत अधिगम सिद्धान्त, सम्बद्ध–प्रतिक्रिया सिद्धान्त तथा क्रिया–प्रसूत अधिगम सिद्धान्त में अन्तर; एरिक्सन की मनो–सामाजिक विकास की अवस्थायें– एरिक्सन का मनो–सामाजिक विकास का सिद्धांत, एरिक्सन द्वारा वर्णित मनो–सामाजिक अवस्थाएँ; संज्ञानात्मक विकास– जीन पियाजे का संज्ञानात्मक विकास, पियाजे के संज्ञानात्मक विकास की अवस्थाएँ, ब्रूनर का संज्ञानात्मक सिद्धान्त; कोलबर्ग का नैतिक विकास का सिद्धान्त– नैतिक विकास की अवधारणा, लारेन्स कोलबर्ग का नैतिक विकास का सिद्धान्त, कोलबर्ग के नैतिकता के सिद्धान्त की आलोचना; वाइगोत्स्की का सामाजिक तथा सांस्कृतिक विकास का सिद्धान्त– वाइगोत्स्की का सामाजिक तथा सांस्कृतिक विकास का सिद्धान्त, संज्ञानात्मक विकास से संबंधित प्रत्यय, वाइगोत्स्की और पियाजे के संज्ञानात्मक सिद्धान्त की तुलना, बालक के सामाजिक–सांस्कृतिक विकास में शिक्षक, घर के वयस्क सदस्यों तथा मित्रमण्डली की भूमिका	**इकाई 3** : अधिगम के सैद्धांतिक दृष्टिकोण एवं अंतर–सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य **(पृष्ठ 153–206)**
इकाई–4 वैयक्तिक अंतरों के अध्ययन की विधियाँ– निरीक्षण विधि, वैयक्तिक–विषय अध्ययन विधि, साक्षात्कार, आत्मनिरीक्षण विधि, आत्मकथा; विशिष्ट बालकों का परिचय– विशिष्ट बालकों का वर्गीकरण, विशिष्ट बालकों की पहचान, बौद्धिक मूल्यांकन के आधार पर वर्गीकरण और शिक्षण की रणनीतियाँ; दृष्टि अक्षम बालक; विकलांग बालक	**इकाई 4** : अध्ययन के वैयक्तिक अंतरों की विधियां और समावेशी शिक्षा **(पृष्ठ 207–267)**

विषय–सूची

परिचय 1–2

इकाई 1 बच्चों की अभिवृद्धि एवं विकास 3–97

1.0 परिचय
1.1 उद्देश्य
1.2 विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में बालक एवं बाल्यावस्था
  1.2.1 विभिन्न संस्कृतियों में बाल्यावस्था
  1.2.2 संस्कृति, समाज एवं बाल्यावस्था
1.3 अभिवृद्धि एवं विकास
  1.3.1 अभिवृद्धि एवं विकास की अवधारणा
  1.3.2 वृद्धि एवं विकास के तरीके
1.4 विकास के सिद्धान्त
  1.4.1 विकास के विविध सिद्धान्त
  1.4.2 विकास की अवस्थायें
1.5 बालकों की वृद्धि एवं विकास
  1.5.1 बालक अधिगमकर्ता के रूप में
  1.5.2 मनोवैज्ञानिक पहचान के रूप में बालक
  1.5.3 बालकों के मुख्य कौशलों का विकास
  1.5.4 बालकों का मानसिक विकास
  1.5.5 बालकों का भाषा विकास
  1.5.6 संवेगात्मक/भावनात्मक विकास
  1.5.7 लिंग भूमिका
  1.5.8 खेलों द्वारा समाजीकरण
1.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
1.7 सारांश
1.8 मुख्य शब्दावली
1.9 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
1.10 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 2 किशोरावस्था की अभिवृद्धि एवं विकास 99–152

2.0 परिचय
2.1 उद्देश्य
2.2 विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में किशोरावस्था
  2.2.1 विभिन्न संस्कृतियों में किशोरावस्था
  2.2.2 लिंग पहचान एवं लिंगीय स्टीरियोटाइप
2.3 किशोरावस्था में अभिवृद्धि एवं विकास
  2.3.1 किशोरावस्था में शारीरिक विकास
  2.3.2 किशोरावस्था में मानसिक विकास
  2.3.3 किशोरावस्था में मनोसामाजिक विकास
  2.3.4 शारीरिक, सामाजिक व मनोवैज्ञानिक आवश्यकताएं
2.4 सामाजिक–सांस्कृतिक सन्दर्भ में किशोर
  2.4.1 नगरीय मलिन बस्तियों में किशोरों का विकास
  2.4.2 भारतीय सन्दर्भ में किशोरों की समस्यायें

2.4.3 किशोरों को निर्देशन की आवश्यकता
2.4.4 निर्णय लेना तथा जोखिम वहन व्यवहार
2.5 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
2.6 सारांश
2.7 मुख्य शब्दावली
2.8 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
2.9 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 3 अधिगम के सैद्धांतिक दृष्टिकोण एवं अंतर–सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य 153–206

3.0 परिचय
3.1 उद्देश्य
3.2 अधिगम का व्यवहारवादी दृष्टिकोण
3.2.1 सम्बद्ध–प्रतिक्रिया सिद्धान्त
3.2.2 क्रिया प्रसूत अधिगम सिद्धान्त
3.2.3 सम्बद्ध–प्रतिक्रिया सिद्धान्त तथा क्रिया–प्रसूत अधिगम सिद्धान्त में अन्तर
3.3 एरिक्सन की मनो–सामाजिक विकास की अवस्थायें
3.3.1 एरिक्सन का मनो–सामाजिक विकास का सिद्धांत
3.3.2 एरिक्सन द्वारा वर्णित मनो–सामाजिक अवस्थाएँ
3.4 संज्ञानात्मक विकास
3.4.1 जीन पियाजे का संज्ञानात्मक विकास
3.4.2 पियाजे के संज्ञानात्मक विकास की अवस्थाएँ
3.4.3 ब्रूनर का संज्ञानात्मक सिद्धान्त
3.5 कोलबर्ग का नैतिक विकास का सिद्धान्त
3.5.1 नैतिक विकास की अवधारणा
3.5.2 लारेन्स कोलबर्ग का नैतिक विकास सिद्धान्त
3.5.3 कोलबर्ग के नैतिकता के सिद्धान्त की आलोचना
3.6 वाइगोत्स्की का सामाजिक तथा सांस्कृतिक विकास का सिद्धान्त
3.6.1 वाइगोत्स्की का सामाजिक तथा सांस्कृतिक विकास का सिद्धान्त
3.6.2 संज्ञानात्मक विकास से संबंधित प्रत्यय
3.6.3 वाइगोत्स्की और पियाजे के संज्ञानात्मक सिद्धान्त की तुलना
3.6.4 बालक के सामाजिक–सांस्कृतिक विकास में शिक्षक, घर के वयस्क सदस्यों तथा मित्रमण्डली की भूमिका
3.7 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
3.8 सारांश
3.9 मुख्य शब्दावली
3.10 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
3.11 सहायक पाठ्य सामग्री

इकाई 4 अध्ययन के वैयक्तिक अंतरों की विधियां और समावेशी शिक्षा 207–267

4.0 परिचय
4.1 उद्देश्य
4.2 वैयक्तिक अंतरों के अध्ययन की विधियाँ
4.2.1 निरीक्षण विधि
4.2.2 वैयक्तिक–विषय अध्ययन विधि
4.2.3 साक्षात्कार
4.2.4 आत्मनिरीक्षण विधि
4.2.5 आत्मकथा

4.3 विशिष्ट बालकों का परिचय
4.3.1 विशिष्ट बालकों का वर्गीकरण
4.3.2 विशिष्ट बालकों की पहचान
4.3.3 बौद्धिक मूल्यांकन के आधार पर वर्गीकरण और शिक्षण की रणनीतियाँ
4.4 दृष्टि अक्षम बालक
4.5 विकलांग बालक
4.6 अपनी प्रगति जांचिए प्रश्नों के उत्तर
4.7 सारांश
4.8 मुख्य शब्दावली
4.9 स्व–मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
4.10 सहायक पाठ्य सामग्री

परिचय

टिप्पणी

प्रस्तुत पुस्तक 'बाल्यावस्था एवं उसका विकास' का लेखन विश्वविद्यालय के बी.एड. प्रथम वर्ष के निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुसार किया गया है।

विकास की प्रक्रिया एक अविरल, क्रमिक और जीवन भर चलने वाली प्रक्रिया होती है। इस प्रक्रिया के तहत बालक का शारीरिक, क्रियात्मक, संज्ञानात्मक, भाषागत, संवेगात्मक और सामाजिक विकास होता है। बाल–विकास प्रक्रिया के अन्तर्गत रुचियों, आदतों, दृष्टिकोणों, जीवन–मूल्यों, स्वभाव, व्यक्तित्व–व्यवहार आदि को शामिल किया जाता है। बाल्यावस्था में विकास से तात्पर्य होता है बालक के वृद्धि–विकास की सर्वांगीण प्रक्रिया। यह प्रक्रिया जन्म से पूर्व गर्भ में ही प्रारंभ हो जाती है। विकास की इस प्रक्रिया में वह गर्भावस्था, शैशवावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था इत्यादि कई चरणों से गुजरते हुए परिपक्वता की अवस्था को प्राप्त करता है।

बाल्यावस्था के विकासात्मक बदलाव बहुआयामी और परस्पर संबद्ध होते हैं और सापेक्षतया स्थिर भी। किशोरावस्था के दौरान शरीर के साथ–साथ संवेगात्मक, सामाजिक और संज्ञानात्मक क्रियात्मकता में भी तेजी से परिवर्तन दिखाई देते हैं। बाल्यावस्था में वृद्धि और विकास को परिवार, पड़ोस, सहपाठी समूह, समुदाय, समाज, शिक्षालय ही नहीं, जाति, धर्म, लिंग, वर्ग, मीडिया, शहरीकरण–वैश्वीकरण आदि सभी प्रभावित करते हैं।

इस पुस्तक में बाल्यावस्था और विकास से संबंधित सभी अहम पहलुओं का सांगोपांग अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। प्रत्येक अध्याय के आरंभ में संदर्भित विषय का परिचय व उद्देश्य स्पष्ट कर दिया गया है। अध्याय के बीच–बीच में शिक्षार्थियों के स्व–मूल्यांकन के लिए 'अपनी प्रगति जांचिए' स्तंभ के तहत वैकल्पिक प्रश्न भी दिए गए हैं।

अध्ययन की सुविधा के लिए समूचे पाठ्यक्रम को चार इकाइयों में समायोजित किया गया है। इन इकाइयों का विवरण इस प्रकार है–

पहली इकाई बच्चों की वृद्धि और विकास पर आधारित है। इसमें विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में बालकों की अभिवृद्धि एवं विकास को समझाया गया है। साथ ही विकास के सिद्धांत, विकास की अवस्थाएं, अभिवृद्धि एवं विकास की अवधारणा का अध्ययन किया गया है।

दूसरी इकाई में किशोरावस्था की अभिवृद्धि एवं विकास पर प्रकाश डाला गया है। इसमें विभिन्न संस्कृतियों में किशोरावस्था, शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक विकास, सामाजिक–सांस्कृतिक एवं भारतीय संदर्भ में किशोरों की समस्या आदि तथ्यों को समझाया गया है।

तीसरी इकाई अधिगम के सैद्धांतिक दृष्टिकोण पर आधारित है। इसमें अधिगम के व्यावहारिक सिद्धांत, एरिक्सन की मनो–सामाजिक विकास की अवस्थाएं, संज्ञानात्मक विकास का सिद्धांत, कोलबर्ग एवं वाइगोत्स्की के सिद्धांतों का विश्लेषण किया गया है।

चौथी इकाई वैयक्तिक अंतरों के अध्ययन की विधियों एवं समावेशी शिक्षा पर आधारित है। इसमें निरीक्षण विधि, साक्षात्कार विधि, आत्मकथा विधि तथा विशिष्ट बालकों की शिक्षा का अध्ययन किया गया है।

टिप्पणी

प्रस्तुत पुस्तक में बाल्यावस्था और विकास से संबंधित सभी आवश्यक पहलुओं का विश्लेषण सरल एवं रोचक रूप से किया गया है। हमें आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि यह पुस्तक अध्येताओं का ज्ञानवर्धन कर उनके मार्गदर्शन में सहायक सिद्ध होगी।

इकाई 1 बच्चों की अभिवृद्धि एवं विकास

टिप्पणी

संरचना

1.0 परिचय
1.1 उद्देश्य
1.2 विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में बालक एवं बाल्यावस्था
  1.2.1 विभिन्न संस्कृतियों में बाल्यावस्था
  1.2.2 संस्कृति, समाज एवं बाल्यावस्था
1.3 अभिवृद्धि एवं विकास
  1.3.1 अभिवृद्धि एवं विकास की अवधारणा
  1.3.2 वृद्धि एवं विकास के तरीके
1.4 विकास के सिद्धान्त
  1.4.1 विकास के विविध सिद्धान्त
  1.4.2 विकास की अवस्थायें
1.5 बालकों की वृद्धि एवं विकास
  1.5.1 बालक अधिगमकर्ता के रूप में
  1.5.2 मनोवैज्ञानिक पहचान के रूप में बालक
  1.5.3 बालकों के मुख्य कौशलों का विकास
  1.5.4 बालकों का मानसिक विकास
  1.5.5 बालकों का भाषा विकास
  1.5.6 संवेगात्मक/भावनात्मक विकास
  1.5.7 लिंग भूमिका
  1.5.8 खेलों द्वारा समाजीकरण
1.6 अपनी प्रगति जाँचिए प्रश्नों के उत्तर
1.7 सारांश
1.8 मुख्य शब्दावली
1.9 स्व-मूल्यांकन प्रश्न एवं अभ्यास
1.10 सहायक पाठ्य सामग्री

1.0 परिचय

विकास एक सार्वभौमिक एवं सतत् प्रक्रिया है जो संसार के प्रत्येक जीव में पायी जाती है। यह जीवन के प्रारम्भ से अर्थात् गर्भाधारण से प्रारम्भ होकर जीवन के अन्त अर्थात् मृत्यु तक निरन्तर चलती रहती है। मानव विकास का अध्ययन मनोविज्ञान का एक महत्वपूर्ण विषय है। विकासात्मक मनोविज्ञान के अन्तर्गत मानव विकास का अध्ययन किया जाता है जबकि किशोरावस्था तक के विकास का अध्ययन बाल मनोविज्ञान के अन्तर्गत किया जाता है। आजकल बाल मनोविज्ञान के समान बाल विकास का प्रयोग किया जाता है। बाल मनोविज्ञान या बाल विकास में यह ज्ञात किया जाता है कि एक विकास की अवस्था से दूसरी विकास की अवस्था तक क्या-क्या परिवर्तन होते हैं, ये परिवर्तन कब होते है तथा इन परिवर्तनों के क्या कारण होते हैं।

प्रस्तुत इकाई में विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में बालकों की अभिवृद्धि एवं विकास को समझाया गया है, साथ ही विकास के सिद्धांत, विकास की अवस्थाएं, अभिवृद्धि एवं विकास की अवधारणा का विस्तारपूर्वक अध्ययन किया गया है।

टिप्पणी

1.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में बालकों की बाल्यावस्था को समझ पाएंगे;
- अभिवृद्धि एवं विकास की अवधारणा को समझ पाएंगे;
- विकास के सिद्धांतों एवं अवस्थाओं की व्याख्या कर पाएंगे;
- बालकों के मुख्य कौशलों के विकास की प्रक्रिया को जान पाएंगे;
- विभिन्न संस्कृतियों एवं समाज में बच्चों की भूमिका को जान पाएंगे।

1.2 विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में बालक एवं बाल्यावस्था

बाल्यावस्था बाल विकास की दूसरी अवस्था है। शैशवावस्था के बाद बालक बाल्यावस्था में प्रवेश करता है। यह अवस्था छह वर्ष से बारह वर्ष तक होती है। बाल्यावस्था में प्रवेश करने पर बालक का इतना शारीरिक एवं मानसिक विकास हो चुका होता है कि वह अपने आसपास के वातावरण की परिस्थितियों से काफी परिचित होने लगता है। बाल्यावस्था में व्यक्ति की समस्त शारीरिक एवं मानसिक क्षमताओं तथा योग्यताओं का उदय एवं विकास होता है। कुछ शिक्षाविदों तथा मनोवैज्ञानिकों ने बाल्यावस्था को व्यक्ति के जीवन की निर्माणकारी अवस्था (Constructive Period of Life) कहा है। यह वह अवस्था होती है जिसमें बालक वैयक्तिक एवं सामाजिक व्यवहार को तथा शिक्षा सम्बन्धी बातों को सीखना प्रारम्भ कर देता है इस अवस्था में बालक में जो भी आदतें एवं ढंग विकसित हो जाते हैं उनमें आगे चलकर परिवर्तन करना बड़ा कठिन होता है, इसलिए इस अवस्था को उसके भावी जीवन की आधारशिला कहा जाता है।

शिक्षा ग्रहण करने के लिए यह आयु सबसे अधिक उपयुक्त मानी जाती है, इसलिए इस आयु को शिक्षाविद् प्रारम्भिक विद्यालय की आयु (Elementary Education Age) कहकर सम्बोधित करते हैं। कोल एवं ब्रूस ने इस अवस्था को जीवन का अनोखा काल (Unique Period of Life) कहा है। इस अवस्था को समझ पाना बहुत कठिन होता है क्योंकि विकास की दृष्टि से यह एक जटिल अवस्था है। इस अवस्था में बालक के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं संवेगात्मक सभी पक्षों में अनोखे परिवर्तन होते हैं। बालक जब बाल्यावस्था में प्रवेश करता है तो उसमें सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करने की भावना दिखाई पड़ती है और बालक अलग-अलग समूह बनाते हैं। इसलिए इस अवस्था को दल/गिरोह (Gang) भी कहकर पुकारा गया है।

ब्लेयर (Blair), जोन्स (Jones) और सिम्पसन (Simpson) ने बाल्यावस्था के बारे में लिखा है कि- "बाल्यावस्था वह अवस्था है जिसमें व्यक्ति के मूलभूत दृष्किोण, मूल्यों और आदर्शों का एक बहुत बड़ी सीमा तक निर्धारण होता है।"

फ्रायड एवं उनके समर्थकों ने इस अवस्था को विशेष महत्व दिया है। इनके अनुसार इस अवस्था में बालक पहले तीन वर्षों में बहुत तेजी से बढ़ता है, लेकिन बाद के तीन से छह वर्ष की आयु में धीमी गति से बढ़ता है। बाल्यावस्था के दो स्तर होते हैं।

बाल्यावस्था की विशेषताएँ (Characteristics of Childhood)- बालक की बाल्यावस्था 2-12 वर्ष की आयु मानी जाती है। इस अवस्था को दो भागों में विभाजित किया गया है। 2-6 वर्ष की अवस्था को पूर्व-बाल्यावस्था एवं 6-12 वर्ष की आयु को उत्तर-बाल्यावस्था कहा जाता है। मनोवैज्ञानिक इसे निर्माणकारी अवस्था बतलाते हैं। इस अवस्था में बालक में जिन आदतों को जिस ढंग से विकसित कर दिया जाता है उनमें आगे जाकर परिवर्तन करना कठिन होता है। बाल विकास की दृष्टि से बाल्यावस्था की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

टिप्पणी

1. **शारीरिक एवं मानसिक विकास की स्थिरता** (Stability of Physical and Mental Development)- बाल्यावस्था में बालक के शारीरिक एवं मानसिक विकास की गति धीमी पड़ जाती है। उसकी शारीरिक शक्तियों में दृढ़ता आ जाती है। इस अवस्था में बालक आंशिक परिपक्वता के कारण वयस्क सा दिखाई पड़ता है। बाल्यावस्था में बालक का मानसिक विकास धीमी गति से होता है। इस अवस्था में बालक में संवेदना, प्रत्यक्षीकरण, तर्क, चिन्तन, निरीक्षण, बुद्धि एवं विवेक जैसी शक्तियों का विकास होने लगता है। इस अवस्था में बालक पूछने लगता है कि यह ऐसा क्यों है? प्रो. रॉस ने माना है कि शारीरिक एवं मानसिक स्थिरता बाल्यावस्था की सबसे बड़ी एवं महत्वपूर्ण विशेषता है।
2. **जिज्ञासा की प्रबलता** (Intensity of Curiosity)- इस अवस्था में बालक के अन्दर जिज्ञासा की प्रवृत्ति बहुत प्रबल होती है। बालक जिन वस्तुओं के सम्पर्क में आता है, वह उनके विषय में जानना चाहता है जिसके लिए वह क्यों, कैसे कब आदि प्रश्न करता है। प्रो. रॉस का कहना है कि उत्तर बाल्यावस्था में बालक ऐसी बातों के प्रति अत्यधिक जिज्ञासु होते हैं कि अमुक बातें कैसे होती हैं, अमुक चीज कैसे काम करती है। ये क्यों हुआ, ऐसा कैसे हुआ आदि विभिन्न विषयों पर सूचनाएँ एकत्रित करता है।
3. **आत्मनिर्भरता की भावना** (Feeling of Self-reliance)- बाल्यावस्था में बालक शैशवावस्था की भाँति प्रत्येक दैनिक कार्य के लिए दूसरों पर निर्भर नहीं होता है। वह अपने व्यक्तिगत कार्य जैसे नहाना, धोना, कपड़ा पहनना, खाना-खाना, बाल बनाना आदि स्वयं करना सीख जाता है।
4. **खेलों की प्रधानता** (Importance of Play)- इस अवस्था में बालक में खेलों के प्रति रुझान अधिक होता है। बालक सामूहिक खेलों को अधिक खेलना पसंद करते हैं। स्पेन्सर ने कहा है कि बालक खेलों द्वारा अपनी अतिरिक्त शक्ति का व्यय करता है।
5. **रचनात्मक प्रवृत्ति** (Construction Tendency)- इस अवस्था में बालक-बालिकाओं में रचनात्मक प्रवृत्ति देखने को मिलती है। उन्हें रचनात्मक कार्य करने में आनन्द की प्राप्ति होती है। बालक मिट्टी, लकड़ी, ईंट, पत्थर के टुकड़ो से कुछ न कुछ बनाकर खेलते हैं।
6. **संचय प्रवृत्ति** (Acquisition Tendency)- इस अवस्था में बालकों में संचय की भावना विकसित हो जाती है। उनकी जेबें किसी न किसी वस्तु से भरी रहती हैं। बालक अपनी जेबों में अकसर पुरानी स्टाम्प, कंकड़-पत्थर, खिलौने, गोलियां, मशीनों के पुर्जे, खिलौने के हिस्से आदि भर लेते हैं।
7. **नैतिक विकास** (Moral Development)- बाल्यावस्था में बालक में नैतिक गुणों का विकास प्रारम्भ हो जाता है। बालक न्याय, अन्याय, ईमानदारी, बेईमानी,

टिप्पणी

सच-झूठ, बड़ों का सम्मान करना आदि नैतिक गुणों को समझने लगता है और वह नैतिक गुणों को अपने जीवन में उतारना चाहता है।

8. **भ्रमण प्रवृत्ति** (Tendency of Excursion)- बाल्यावस्था में बालक में भ्रमण प्रवृत्ति अधिक दिखाई पड़ती है। बर्ट ने अपने अध्ययनों के आधार पर बताया है कि बाल्यावस्था में बालक बिना किसी उद्देश्य के इधर-उधर घूमने लगता है। विद्यालय से बिना छुट्टी लिए भागने लगता है। उसमें नये-नये स्थान देखने की प्रवृत्ति अधिक पायी जाती है।

9. **सामाजिक विकास** (Social Development)- इस अवस्था में बालक में सामाजिक गुणों का भी विकास प्रारम्भ हो जाता है। उसमें सहयोग, सहकारिता, सद्भावना आदि गुणों का विकास होने लगता है। इस अवस्था में बालकों में सामूहिकता का गुण पाया जाता है। बाल्यावस्था में बालक अधिकांश समय दूसरे बालकों के साथ खेलने में गुजारता है।

10. **प्रतिस्पर्द्धा की भावना की प्रबलता** (Excess of the Feeling of Competition)- बाल्यावस्था में बालक में प्रतिस्पर्द्धा की भावना बहुत प्रबल होती है। बालकों में अपने भाई-बहन तथा अन्य बालकों से प्रत्येक कार्य में स्पर्धा करने की भावना होती है। बालक खेल-कूद में चुनौतियों को आसानी से स्वीकार कर लेते हैं।

बाल्यावस्था में शिक्षा की प्रकृति (Nature of Education During Childhood)

1. **बाल मनोविज्ञान पर आधारित** (Based on Child Psychology)- मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति इस बात पर बल देती है कि बालक की शिक्षा मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों तथा विधियों पर आधारित होनी चाहिए। अत: प्रत्येक शिक्षक को बाल मनोविज्ञान का ज्ञान होना चाहिए। शिक्षा का केन्द्र बालक होता है और शिक्षा तथा पाठ्यवस्तु दोनों बालक के लिए हैं। बालक की शिक्षा उसकी योग्यताओं, रुचियों तथा क्षमताओं के अनुसार होनी चाहिए।

2. **बालक की शिक्षा का स्वरूप** (Nature of Child Education)- बालक को पूर्ण रूप से विकसित करने के लिए आवश्यक है कि उसकी आधारशिला मजबूत होनी चाहिए। अन्य शब्दों में बालक को बाल्यावस्था से ही उचित दशा में विकसित किया जाना चाहिए। इस दृष्टि से यह प्रवृत्ति बालक की प्राथमिक शिक्षा को विशेष महत्व प्रदान करती है। साथ ही इस बात पर बल देती है कि शिक्षा की प्रक्रिया को अधिक से अधिक मनोरंजक बनाया जाए। ऐसी शिक्षा बालक स्वाभाविक रूप से ग्रहण करता है।

3. **बालक एक सक्रिय कारक के रूप में** (Child as an Active Factor)- बालक सक्रिय रूप से विकसित होता रहे इसके लिए आवश्यक है कि शिक्षक को अपने विषय के साथ-साथ बालक की मूल प्रवृत्तियों, योग्यताओं, क्षमताओं, आवश्यकताओं एवं प्रवृत्तियों का ज्ञान होना चाहिए, जिससे बालक का सर्वांगीण विकास सम्भव हो सके। बालक को बालक ही समझा जाना चाहिए और उसकी शक्ति, दक्षता और योग्यता के अनुसार ही शिक्षित किया जाना चाहिए।

4. **बाल्यावस्था प्रकृति का अनोखा उपहार** (Unique Gift of Nature)- यह प्रवृत्ति इस बात पर बल देती है कि शिक्षा एक आन्तरिक प्रक्रिया है। अत: समस्त

कृत्रिमताओं तथा बन्धनों को तोड़कर बालक की प्रकृति को दृष्टि में रखते हुए उसकी शक्तियों का सामंजस्यपूर्ण विकास किया जाना चाहिए। बालक के व्यक्तित्व का आदर किया जाये तथा उसके साथ प्रेम और सहानुभूति का व्यवहार करते हुए उसे पूर्ण रूप से विकसित होने की स्वतन्त्रता प्रदान की जाये।

टिप्पणी

5. **भाषा विकास पर बल** (Emphasis on Language)– बाल्यावस्था भाषा सीखने का उपयुक्त काल होता है। इस काल में बालक किसी भी प्रकार की भाषा सीख सकता है। अतः इस काल में भाषा ज्ञान पर अधिक बल दिया जाना चाहिए।
6. **रोचक पाठ्यवस्तु** (Interesting Content)– इस स्तर पर विद्यालयी पाठ्यक्रम निर्धारित करते समय बालकों की रुचियों, प्रकृति एवं वैयक्तिक विभिन्नताओं को अवश्य ध्यान में रखना चाहिए। पाठ्यक्रम विस्तृत एवं व्यावहारिक होगा तो बालक की उसके प्रति रुचि बढ़ेगी। बालकों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पाठ्यक्रम में भाषा, गणित, विज्ञान, कला, सुलेख, निबन्ध रचना आदि का समावेश होना चाहिए।
7. **रुचिकर शिक्षण विधियाँ** (Interesting Teaching Methods)– शिक्षक जिन कौशलों का उपयोग करके सूचनाओं को बालकों तक पहुँचाता है उसे शिक्षण विधि कहते हैं। शिक्षण विधि रुचिकर होनी चाहिए, ताकि बालक पढ़ाये गये पाठ को आसानी से समझ सके। बाल्यावस्था में बालकों का ध्यान खेलों की ओर अधिक होता है। अतः शिक्षण विधियों में खेल विधि तथा क्रिया आधारित विधियों को शामिल किया जाना चाहिए।

बाल्यावस्था के स्तर (Level of Childhood)– मनोवैज्ञानिकों ने बाल्यावस्था को दो वर्गों में वर्गीकृत किया है–

पूर्व बाल्यावस्था (Early-Childhood)– इस अवस्था में बालक तीव्र गति से विकसित होता है। इस अवस्था का बच्चे के जीवन पर विशेष प्रभाव रहता है। यह तीव्र गति से शारीरिक और बौद्धिक विकास का काल है। इस काल की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

- इस अवधि में पेशियों के विकास के अनुपात में वृद्धि होती है। जिन क्रीड़ा-कौतुकों को वह आत्मसात करता है और व्यवहार में लाता है, वे उसके पेशीय और चेतना विकास में सहायक बनते हैं। वह पकड़ने, फेंकने, दौड़ने, उछलने, ऊँची चीज पर चढ़ने, लिखने, सरल उपकरणों का प्रयोग करना आदि सीख लेता है।
- इस अवधि में बालक की शब्द शक्ति भी बढ़ती है। शब्द सुसंबद्ध वाक्यांश और वाक्यों से जुड़ते हैं तथा सहज विचार आसानी से व्यक्त होने लगते हैं। घर के सामाजिक एवं आर्थिक वातावरण से भाषाई विकास प्रभावित रहता है। माता-पिता की विशेष देखभाल और अच्छे सामाजिक वातावरण में रहने के कारण उसकी वाणी का भी समुचित विकास होने लगता है।

टिप्पणी

- बच्चे का पहला सामाजिक पड़ाव उसका परिवार होता है। यहां वह सामाजिक समागम में प्रथम पाठों को सीखता है। वह परिवार के सदस्यों के साथ बर्ताव करना, बातें करने तथा संलाप-आलाप करना सीखता है। उसका दूसरा अनुभव उसे पड़ोस से प्राप्त होता है। वह खेल के साथी बनाना प्रारम्भ कर देता है। अन्य बच्चों के साथ संबंध विकसित करने लगता है और आत्म विश्वास के साथ उनके बीच रहकर अपना रास्ता बनाना सीख लेता है। यहीं वह सहयोग, सहानुभूति, सामाजिक स्वीकृति, शैतानी, प्रताड़ना, झगड़ा, प्रतिस्पर्द्धा के लक्षणों वाले एक जटिल सामाजिक व्यवहार को सीखता है।
- इस अवस्था पर बालक भाव भावुकता में व्यवस्थित होना शुरू हो जाता है। उसका सबसे पहला अंत:भाव प्रेम है जो उसके स्वयं में निहित होता है। इसलिए इस अवस्था को आत्मरति, आत्म मोह या अपने-आपसे प्रेम की अवस्था भी कहा जाता है। शीघ्र ही बच्चा अपने माता-पिता के प्रति अपनी प्रेम भावना का विस्तार करता है। फ्रायड के अनुसार बालक माता को प्रेम करता है तथा कन्या का सम्बन्ध पिता से अधिक गहन बनता है। इस प्रकार यूनानी मिथक शास्त्रों से मातृरति और पितृरति की ग्रंथि इसी अवस्था में विकसित होती है।
- इस अवस्था को विकास की सबसे प्रभावशाली अवस्था कहा जा सकता है। इस अवस्था में बालक माहौल से जुड़े हुए कई प्रकार के अनुभवों को प्राप्त कर लेता है। वह खेल-खेल में पढ़ने और लिखने की मूल बातों को सीख लेता है। इस अवधि में आरम्भिक शिक्षा देने में मॉन्टेसरी और किंडरगार्टन पद्धतियां महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं जिसके कारण बालक अधिक कल्पनाशील बन जाता है। इस अवस्था को मानसिक तरंग की अवस्था भी कहा जाता है। इस अवस्था में बालक अपने कल्पना संसार में विचरण करने लगता है।

उत्तर बाल्यावस्था (Later Childhood)- यह अवधि विद्यालय में प्रवेश से आरम्भ होकर यौवनारम्भ के साथ समाप्त होने वाली छह से लेकर बारह वर्ष के बीच की अवस्था होती है। उत्तर बाल्यकाल में बालक के विकास में स्थायित्व आ जाता है। फ्रायड के अनुसार इस अवस्था में बालक में तनाव की स्थिति समाप्त हो जाती है तथा वह बाहर की दुनिया को समझने लगता है। यह परिपक्वता का काल है लेकिन वह पूर्ण परिपक्व नहीं होता है। इस समय उसमें नई रुचियाँ विकसित होती हैं। जहाँ तक यौन शिक्षा का संबंध है इस अवस्था में सरल होती है, लेकिन इस अवस्था की समाप्ति पर अत्यधिक बलपूर्वक उत्पन्न होती है। इसी कारण इस अवस्था को अवयक्तता की अवधि भी कहा जाता है। इस अवस्था की मुख्य विशेषताएँ निम्न हैं-

- यह क्रमिक विकास की अवधि है। दूध के दांतों के स्थान पर स्थाई दांत लेने लगते हैं। ऊंचाई एवं भार बढ़ने लगता है। इस अवस्था में बच्चा शारीरिक रूप से समर्थ नहीं होता है। उसको किसी एक या अन्य कार्य में लगाना होता है ताकि उसका शारीरिक विकास ठीक प्रकार से हो सके।
- इस अवधि में सहयोग और खेल भावना जैसे सामाजिक गुणों का विकास होता है। समूहचारिता की प्रवृत्ति बढ़ती है और बच्चा जब अपने पड़ोस तथा स्कूल में अपनी उम्र के बच्चों के सम्पर्क में आता है तो सामाजिक विकास के अवसर प्राप्त होते हैं। रॉस ने लिखा है कि वह अपनी इच्छाओं को एकाकी पूरा न